ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

मैसर्स नरभेराम पावर एंड स्टील प्राइवेट लिमिटेड

2 मई, 2018

मुख्य न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा, न्यायमूर्ति ए. एम. खानविलकर और न्यायमूर्ति डी. वाई. चन्द्रचूड़

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996(1996 का 26) – धारा 11(6) – मध्यस्थ की नियुक्ति – जहां बीमाकर्ता कंपनी द्वारा निराकरण पत्र के माध्यम से कारण बताते हुए बीमा संबंधी दावे को नामंजूर कर दिया जाता है वहां इसका अभिप्राय बीमाकर्ता द्वारा दायित्व से पूर्णतः प्रत्याख्यान करना न कि दावे की धनराशि को विवादित करना होगा, इसलिए, ऐसा विवाद माध्यस्थम् के लिए निर्देशित नहीं किया जा सकेगा और शिकायतों के शमन के लिए सिविल वाद फाइल करना ही समुचित उपचार होगा ।

प्रस्तुत मामले में, प्रत्यर्थी ने ओडिशा राज्य में अपने एक कारखाने की बाबत एक फायर इंडस्ट्रियल ऑल रिस्क पालिसी ली थी । अक्तूबर, 2013 में, "फाएलिन" नामक एक चक्रवाती तूफान आया जिससे ओडिशा राज्य के अधिकांश भाग प्रभावित हुए । उक्त चक्रवाती तूफान के क़ारण प्रत्यर्थी को नुकसान हुआ जिसका प्राक्कलन उसने 3,93,36,224.00 रुपए किया । अपीलार्थी-बीमाकर्ता को एक सूचना दी गई थी और उसने एक कंपनी को सर्वेक्षक के रूप में नियुक्त किया, जिसने कारखाना परिसर का दौरा किया । प्रत्यर्थी और बीमाकर्ता के बीच काफी पत्र-व्यवहार हुआ । इसके पश्चात् प्रत्यर्थी ने सर्वेक्षक की रिपोर्ट पर टिप्पणी की और अपीलार्थी से उसके दावे का परिनिर्धारण करने का अनुरोध किया । चूंकि अंततोगत्वा, दावे का परिनिर्धारण नहीं किया गया था, इसलिए प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को यह सूचित करते हुए एक संसूचना भेजी कि उसने माध्यस्थम् करार का अवलंब लिया है और उससे मध्यस्थ के नाम के बारे में सहमति देने का अनुरोध किया, जिसे उसने नामनिर्दिष्ट किया था । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी द्वारा किए गए दावे का निराकरण करते हुए उक्त पत्र का उत्तर दिया और पक्षकारों के बीच उत्पन्न विवादों को माध्यस्थम् को निर्देशित करने से इनकार कर दिया । चूंकि बीमाकर्ता ने प्रत्यर्थी द्वारा किए गए अनुरोध को

स्वीकार करने से इनकार कर दिया था इसलिए उसने माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (जिसे संक्षेप में "1996 का अधिनियम" कहा गया है) की धारा 11(6) के अधीन एक मध्यस्थ की नियुक्ति करने के लिए एक आवेदन फाइल किया जिससे कि वह प्रत्यर्थी द्वारा नामनिर्दिष्ट मध्यस्थ के साथ मिलकर पक्षकारों के बीच उद्भूत हुए विवादों और मतभेदों का न्यायनिर्णयन करने के लिए एक पीठासीन मध्यस्थ को नियुक्त करने की कार्यवाही कर सके । बीमाकर्ता द्वारा उक्त आवेदन का विरोध किया गया था और उच्च न्यायालय ने, पालिसी के खंड 13 में प्रयुक्त भाषा और दावेदार के दावे का निराकरण करते समय दिए गए कारणों पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय के एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश को मध्यस्थ नियुक्त कर दिया । उक्त आदेश को इस अपील में विशेष इजाजत लेकर चुनौती दी गई है । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – जब माध्यस्थम् खंड का सावधानीपूर्वक पठन किया जाता है तो इससे पूर्णतः सुस्पष्ट हो जाता है कि जब बीमाकर्ता एक बार पालिसी के अधीन या उसकी बाबत दायित्व के संबंध में विवाद करता है तब मध्यस्थ को कोई भी निर्देश नहीं किया जा सकता है । यह खंड के दूसरे भाग में अंतर्विष्ट है । खंड के तीसरे भाग में यह अनुबंधित है कि पालिसी के संबंध में कार्रवाई या वाद चलाने के किसी अधिकार का अवलंब लेने से पूर्व हानि या नुकसान की रकम के संबंध में मध्यस्थ/मध्यस्थों का पूर्व पंचाट इसकी पूर्व-शर्त है । उच्च न्यायालय ने, जैसा कि आक्षेपित आदेश से दर्शित होगा, दूसरे भाग पर जोर दिया है और उस आधार पर यह राय व्यक्त की है कि दूसरे भाग और तीसरे भाग में सामंजस्य नहीं है और वास्तव में यह एक विसंगत टिप्पण प्रतीत होता है क्योंकि स्कीम को दो भागों में विभाजित नहीं किया जा सकता है, जिसमें से एक के संबंध में विनिश्चय माध्यस्थम् द्वारा और दूसरे के संबंध में विनिश्चय वाद में किया जाए । (पैरा 8)

इस बात पर विशेष जोर देने की आवश्यकता नहीं है कि माध्यस्थम् खंड का कठोरतापूर्वक निर्वचन करना आवश्यक है । खंड में की किसी अभिव्यक्ति से माध्यस्थम् का आशय सुस्पष्ट रूप से अभिव्यक्त होना चाहिए । इसमें ऐसी धारणा अधिकथित की जा सकती है जिन स्थितियों में माध्यस्थम् खंड को प्रभावी नहीं किया जा सकता है । यदि किसी खंड में यह अनुबंधित है कि कतिपय परिस्थितियों के अधीन कोई माध्यस्थम् नहीं हो सकता है और वे प्रमाण्य रूप से स्पष्ट हैं तो मध्यस्थ की नियुक्ति से संबंधित संविवाद को छोड़ देना होगा । (पैरा 24)

वर्तमान मामले में, खंड 13 में स्पष्ट रूप से यह आधारतत्व अधिकथित किया गया है कि यदि बीमाकर्ता ने दायित्व को विवादित किया है या उसे स्वीकार नहीं किया है तो कोई मतभेद या विवाद माध्यस्थम् के लिए निर्देशित नहीं किया जाएगा । मामले में विशेष बल इस बात पर दिया गया है कि क्या बीमाकर्ता ने पालिसी के अधीन या उसकी बाबत अपने दायित्व को विवादित किया है या उसे स्वीकार नहीं किया है । बीमाकर्ता द्वारा पत्र के माध्यम् से प्रत्यर्थी के दावे को नामंजूर करने के लिए कारण बताए गए थे । प्रत्यर्थी की ओर से यह निवेदन किया गया है कि उपर्युक्त संसूचना पालिसी के अधीन या उसकी बाबत दायित्व से प्रत्याख्यान करने की कोटि में नहीं आती है । संसूचना के पठन मात्र से विवाद उचित रूप से खंड 13 के भाग 2 के अंतर्गत आता है । खंड के उक्त भाग में स्पष्ट रूप से यह सूचित होता है कि पक्षकार इस संबंध में सहमत हो गए हैं और उन्होंने यह समझ लिया है कि यदि कंपनी ने दायित्व को विवादित किया है या उसे स्वीकार नहीं किया है तो कोई मतभेद या विवाद माध्यस्थम् को निर्देशित नहीं किया जा सकेगा । उस संसूचना में दावे को बिल्कुल भी स्वीकार न करने के लिए कारण बताए गए हैं । यह बीमाकर्ता द्वारा दायित्व से पूर्णतः प्रत्याख्यान करने के सिवाय और कुछ नहीं है । यह हानि की मात्रा से संबंधित कोई विवाद नहीं है । प्रस्तुत मामले में, इस बात से कोई संबंध नहीं है कि पालिसी शून्य थी अथवा नहीं क्योंकि यह प्रश्न बीमाकर्ता द्वारा नहीं उठाया गया था । बीमा-कंपनी ने तथ्यों के आधार पर दायित्व को उपर्युक्त कारणों के आधार पर स्वीकार करने से इनकार करके दावे का निराकरण किया है । ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि परिमाण के संबंध में किसी प्रकार का कोई विवाद है । यह प्रत्यर्थी द्वारा यथा-दावाकृत हानि की क्षतिपूर्ति करने से प्रत्याख्यान है । ऐसी स्थिति पूर्ण रूप से विवादों से प्रत्याख्यान करने और दायित्व को स्वीकार न करने की संकल्पना के भीतर आती है । यह माध्यस्थम् खंडों में से कोई एक खंड नहीं है जिसका निर्वचन इस तरीके से किया जा सकता है कि किसी दावे का प्रत्याख्यान स्वतः विवाद की कोटि में आएगा और इसलिए उसे माध्यस्थम् को निर्देशित करना होगा । पक्षकार पालिसी के अधीन करार किए गए निबंधनों और शर्तों तथा उसमें अंतर्विष्ट माध्यस्थम् खंड से आबद्ध हैं । यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिसमें माध्यस्थम् से बचने के लिए मात्र कपट के अभिकथन का दबाव डाला गया हो । यह कोई ऐसी स्थिति नहीं है जहां यह आधार अपनाया गया हो कि कतिपय दावों का संबंध छूटप्राप्त विषयों से है और इसलिए वे माध्यस्थम् योग्य नहीं हैं । दूसरे भाग में प्रयुक्त

भाषा पूर्णतः स्पष्ट और असंदिग्ध है चूंकि उसमें यह अनुबंधित है कि यह स्पष्ट रूप से माना और समझा गया है कि यदि कंपनी ने दायित्व को विवादित किया है या उसे स्वीकार नहीं किया है तो कोई भी मतभेद या विवाद माध्यस्थम् के लिए निर्देशित किए जाने योग्य नहीं होगा । उच्च न्यायालय ने यह राय अभिव्यक्त करके गंभीर त्रुटि की है कि भाग 2 और भाग 3 के बीच असंगति है । अतः, प्रत्यर्थी जिस एकमात्र उपचार का अवलंब ले सकता है वह यह है कि वह अपनी शिकायतों के शमन के लिए सिविल वाद संस्थित करे । यदि दो मास के भीतर सिविल वाद फाइल कर दिया जाता है तो परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 14 का लाभ उसके फायदे में लागू हो जाएगा । (पैरा 25 और 26)

प्रभेदित निर्णय

पैरा

[1976] [1976] 3 उम. नि. प. 559 =
(1976) 1 एस. सी. सी. 943 :
वल्कन इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम
महाराज सिंह और अन्य । 6,15,18,19,20,26

निर्दिष्ट निर्णय

[2016] (2016) 10 एस. सी. सी. 386 :
ए. अय्यासामी बनाम **ए परमशिवम् और अन्य** ; 6,22

[2016] (2016) 2 एल. डब्ल्यू. 769 :
मैसर्स जम्बो बैग्स लिमिटेड बनाम
मैसर्स दि न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड ; 6,20

[2013] (2013) 4 एस. सी. सी. 44 :
न्यूटन इंजीनियरिंग एंड केमिकल्स लिमिटेड बनाम
इंडियन ऑयल कारपोरेशन लिमिटेड और अन्य ; 14

[2013] (2013) 4 एस. सी. सी. 35 :
दीप ट्रेडिंग कंपनी बनाम **इंडियन ऑयल कारपोरेशन और अन्य** ; 13

[2013] (2013) 1 एस. सी. सी. 641 :
क्लोरो कंट्रोल्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड बनाम
सेवर्न ट्रेंट वॉटर प्यूरीफिकेशन इंक और अन्य ; 6,23

[2013] मनु/एमएच/0542/2013 :
एस्सार स्टील इंडिया लिमिटेड बनाम
दि न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड ; 6,21

[2006] (2006) 2 एस. सी. सी. 638 :
पुंज लॉयड लिमिटेड बनाम **पैट्रोनेट**
एम.एच.बी. लिमिटेड ; 13

[2004] (2004) 8 एस. सी. सी. 644 :
यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम
हरचन्द राय चन्दन लाल ; 5,11

[2000] ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 10 :
ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम
समयनलुर प्राइमरी एग्रीकल्चरल कोआपरेटिव बैंक ; 5,10

[2000] (2000) 8 एस. सी. सी. 151 :
दतार स्विचगियर्स लिमिटेड बनाम
टाटा फाइनेंस लिमिटेड और एक अन्य ; 13

[1966] ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1644 :
जनरल एश्योरेंस सोसायटी लिमिटेड बनाम
चन्दूमल जैन और एक अन्य ; 5,9

[1923] आई. एल. आर. 47 मुम्बई 509 =
ए. आई. आर. 1923 मुम्बई 249 =
बाम्बे एल. आर. 164 :
ईगल स्टार एंड ब्रिटिश डोमिनियन्स इंश्योरेंस कंपनी
बनाम **दीनानाथ एंड हेमराज** । 18

[1894] (1894) 2 आइरिश एल. आर. 723 =
28 आइरिश एल. टी. 95 :
ओ कोनोर बनाम **नारविच यूनियन फॉयर एंड**
लाइफ इंश्योरेंस सोसायटी ; 16

[1893] 1893 अपील केसेज 85 =
9 टी. एल. आर. 146 = 57 जे. पी. 228 :
केलिडोनियन इंश्योरेंस कंपनी बनाम **एंड्रयू गिलमौर** ; 15

[1888] (1888) 20 क्यू. बी. डी. 171,172 : **विनी** बनाम **बिग्नोल्ड** ; 15,16

[1856] (1856) 25 एल. जे. एक्स 308 = 5 एच.एल.सी.811 = 4 डब्ल्यू. आर. 746 : **स्कॉट** बनाम **ऐवरी** । 15

सिविल अपीली अधिकारिता : 2018 की सिविल अपील सं. 2268.

2017 की माध्यस्थम् याचिका सं. 229 में कलकत्ता उच्च न्यायालय के तारीख 5 सितम्बर, 2017 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री पी. के. सेठ और सुश्री मंजीत चावला

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री सचिन दत्ता, ज्येष्ठ अधिवक्ता, सालर एम. खान, सुश्री श्रीदेवी पानिक्कर, पारिका गुप्ता और अमल मेरिन कुरियन

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा ने दिया ।

मु. न्या. मिश्रा – प्रत्यर्थी-मैसर्स नरभेराम पावर एंड स्टील प्राइवेट लिमिटेड ने प्लाट सं. 11 और 13, गुंडीचापदा इंडस्ट्रियल एस्टेट, जिला धेनकनाल, ओडिशा में स्थित कारखाने की बाबत एक फायर इंडस्ट्रियल ऑल रिस्क पालिसी सं. 31150/11/2014/65 ली थी । अक्तूबर, 2013 में, "फाएलिन" नामक एक चक्रवाती तूफान आया जिससे ओडिशा राज्य के अधिकांश भाग प्रभावित हुए । उक्त चक्रवाती तूफान के कारण प्रत्यर्थी को नुकसान हुआ जिसका प्राक्कलन उसने 3,93,36,224.00 रुपए किया । अपीलार्थी-बीमाकर्ता को एक सूचना दी गई थी और उसने अशोक चोपड़ा एंड कंपनी को सर्वेक्षक के रूप में नियुक्त किया, जिसने तारीख 20 और 21 नवम्बर, 2013 को कारखाना परिसर का दौरा किया । प्रत्यर्थी और बीमाकर्ता के बीच काफी पत्र-व्यवहार हुआ । तारीख 22 दिसम्बर, 2014 को प्रत्यर्थी ने सर्वेक्षक की रिपोर्ट पर टिप्पणी की और अपीलार्थी से उसके दावे का परिनिर्धारण करने का अनुरोध किया । चूंकि अंततोगत्वा, दावे का परिनिर्धारण नहीं किया गया था, इसलिए प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को यह सूचित करते हुए तारीख 21 जनवरी, 2017 की एक संसूचना भेजी कि उसने माध्यस्थम् करार का अवलंब लिया है और उससे मध्यस्थ के नाम के बारे में सहमति देने का अनुरोध किया, जिसे उसने नामनिर्दिष्ट किया था ।

2. अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी द्वारा किए गए दावे का निराकरण करते हुए

उक्त पत्र का उत्तर दिया और पक्षकारों के बीच उत्पन्न विवादों को माध्यस्थम् को निर्देशित करने से इनकार कर दिया । चूंकि बीमाकर्ता ने प्रत्यर्थी द्वारा किए गए अनुरोध को स्वीकार करने से इनकार कर दिया था इसलिए उसने माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (जिसे संक्षेप में "1996 का अधिनियम" कहा गया है) की धारा 11(6) के अधीन एक मध्यस्थ की नियुक्ति करने के लिए एक आवेदन फाइल किया जिससे कि वह प्रत्यर्थी द्वारा नामनिर्दिष्ट मध्यस्थ के साथ मिलकर पक्षकारों के बीच उद्भूत हुए विवादों और मतभेदों का न्यायनिर्णयन करने के लिए एक पीठासीन मध्यस्थ को नियुक्त करने की कार्यवाही कर सके ।

3. बीमाकर्ता द्वारा उक्त आवेदन का विरोध किया गया था और उच्च न्यायालय ने, पालिसी के खंड 13 में प्रयुक्त भाषा और दावेदार के दावे का निराकरण करते समय दिए गए कारणों पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय के एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश को मध्यस्थ नियुक्त कर दिया । उक्त आदेश को इस अपील में विशेष इजाजत लेकर चुनौती दी गई है ।

4. हमने अपलार्थी की ओर से विद्वान् काउन्सेल श्री पी. के. सेठ और प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल श्री सचिन दत्ता को सुना ।

5. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउन्सेल द्वारा पालिसी के खंड 13 का अवलंब लेते हुए इस बात पर जोर दिया गया है कि जब एक बार दावे को निराकृत कर दिया गया था और बीमाकर्ता ने इस संबंध में विवाद कर दिया था या पालिसी के अधीन या उसकी बाबत दायित्व को स्वीकार नहीं किया था तब कोई मतभेद या विवाद माध्यस्थम को निर्देशित नहीं किया जाना चाहिए था । उसने आगे यह निवेदन भी किया कि उच्च न्यायालय ने उक्त खंड के निर्वचन के संबंध में यह मत अभिव्यक्त करके गलत दृष्टिकोण अपनाया है कि वह असंदिग्धता से ग्रस्त है और इसका सप्रयोजन पठन किए जाने की आवश्यकता है जिसके न हो सकने पर माध्यस्थम् खंड निरर्थक हो जाता है । **जनरल एश्योरेंस सोसायटी लिमिटेड** बनाम **चन्दूमल जैन और एक अन्य**[1], **ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **समयनलुर प्राइमरी एग्रीकल्चरल कोआपरेटिव बैंक**[2] और **यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **हरचन्द राय चन्दन लाल**[3] वाले विनिश्चयों का अवलंब लिया गया है ।

---

[1] ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1644.

[2] ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 10.

[3] (2004) 8 एस. सी. सी. 644.

6. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल ने यह दलील दी कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश पूर्ण रूप से अभेद्य है और विद्यमान तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में उच्च न्यायालय द्वारा अभिव्यक्त मत में दोष नहीं निकाला जा सकता है । उसने आगे इस बात पर जोर दिया कि जब निराकरण संबंधी पत्र का उचित रूप से अर्थ लगाया जाए तो उसका संबंध पालिसी के अधीन या उसकी बाबत दायित्व के संबंध में विवाद करने और उसे स्वीकार न करने से नहीं है बल्कि वास्तव में वह दावे से इनकार करने की कोटि में आता है, जिसका संबंध मूलभूत रूप से दावे की मात्रा से है । इन निवेदनों को बल प्रदान करने के लिए उसने **वल्कन इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **महाराज सिंह और अन्य**[1], **क्लोरो कंट्रोल्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **सेवर्न ट्रेंट वॉटर प्यूरीफिकेशन इंक और अन्य**[2], **ए. अय्यासामी** बनाम **ए परमशिवम् और अन्य**[3], **मैसर्स जम्बो बैग्स लिमिटेड** बनाम **मैसर्स दि न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[4] और **एस्सार स्टील इंडिया लिमिटेड** बनाम **दि न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[5] वाले मामलों का अवलंब लिया ।

7. परस्पर-विरोधी दलीलों का मूल्यांकन करने के लिए माध्यस्थम् खंड, अर्थात्, पालिसी के खंड 13 की बारीकी से जांच और संवीक्षा करना आवश्यक है । उक्त खंड निम्नलिखित रूप में है :–

> "13. यदि इस पालिसी के अधीन संदत्त की जाने वाली राशि की मात्रा के बारे में (जब दायित्व को अन्यथा स्वीकार कर लिया जाता है) कोई विवाद या मतभेद उद्भूत होगा तो ऐसा मतभेद सभी प्रश्नों के संबंध में स्वतंत्र रूप से पक्षकारों द्वारा लिखित में नियुक्त किए जाने वाले किसी एकमात्र मध्यस्थ को विनिश्चय के लिए निर्देशित किया जाएगा या यदि वे किसी एकमात्र मध्यस्थ के संबंध में सहमत नहीं हो सकते हैं तो किसी पक्षकार द्वारा माध्यस्थम् का अवलंब लेने के 30 दिन के भीतर उसे तीन मध्यस्थों के एक पैनल को निर्देशित किया जाएगा, जिसमें दो मध्यस्थ वे होंगे जिनमें से एक-एक मध्यस्थ विवाद/मतभेद के पक्षकारों में से प्रत्येक पक्षकार द्वारा

---

[1] [1976] 3 उम. नि. प. 559 = (1976) 1 एस. सी. सी. 943.
[2] (2013) 1 एस. सी. सी. 641.
[3] (2016) 10 एस. सी. सी. 386.
[4] (2016) 2 एल. डब्ल्यू. 769.
[5] मनु/एमएच/0542/2013.

नियुक्त किया जाएगा और तीसरा मध्यस्थ ऐसे दो मध्यस्थों द्वारा नियुक्त किया जाएगा और माध्यस्थम् का संचालन माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के उपबंधों के अधीन और उनके अनुसार किया जाएगा ।

यह स्पष्ट रूप से करार किया जाता है और समझा जाता है कि इसमें इसके पूर्व उपबंधित कोई मतभेद या विवाद तब माध्यस्थम् के लिए निर्देशित नहीं किया जाएगा यदि कंपनी ने इस पालिसी के अधीन या उसकी बाबत दायित्व के संबंध में विवाद किया है या उसे स्वीकार नहीं किया है ।

यह अभिव्यक्त रूप से अनुबंधित और घोषित किया जाता है कि इस पालिसी के संबंध में कार्रवाई या वाद चलाने के किसी अधिकार की पूर्व शर्त यह होगी कि ऐसे मध्यस्थ/मध्यस्थों द्वारा हानि या नुकसान की रकम का पंचाट पहले अभिप्राप्त किया जाएगा ।"

(जोर देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

8. जब हम ऊपर उद्धृत खंड का सावधानीपूर्वक पठन करते हैं तो इससे पूर्णतः सुस्पष्ट हो जाता है कि जब बीमाकर्ता एक बार पालिसी के अधीन या उसकी बाबत दायित्व के संबंध में विवाद करता है तब मध्यस्थ को कोई भी निर्देश नहीं किया जा सकता है । यह खंड के दूसरे भाग में अंतर्विष्ट है । खंड के तीसरे भाग में यह अनुबंधित है कि पालिसी के संबंध में कार्रवाई या वाद चलाने के किसी अधिकार का अवलंब लेने से पूर्व हानि या नुकसान की रकम के संबंध में मध्यस्थ/मध्यस्थों का पूर्व पंचाट इसकी पूर्व-शर्त है । उच्च न्यायालय ने, जैसा कि आक्षेपित आदेश से दर्शित होगा, दूसरे भाग पर जोर दिया है और उस आधार पर यह राय व्यक्त की है कि दूसरे भाग और तीसरे भाग में सामंजस्य नहीं है और वास्तव में यह एक विसंगत टिप्पण प्रतीत होता है क्योंकि स्कीम को दो भागों में विभाजित नहीं किया जा सकता है, जिसमें से एक के संबंध में विनिश्चय माध्यस्थम् द्वारा और दूसरे के संबंध में विनिश्चय वाद में किया जाए ।

9. इससे पूर्व कि हम निराकरण संबंधी तथ्य और खंड पर पड़ने वाले उसके प्रभाव पर विचार करें, हम पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउन्सेल द्वारा उद्धृत नजीरों पर चर्चा करना उचित समझते हैं । **जनरल एश्योरेंस सोसायटी लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में संविधान न्यायपीठ ने बीमा संविदा पर विचार करते समय यह राय व्यक्त की है कि ऐसी संविदा वाणिज्यिक संव्यवहारों के आधार पर की जाती है और किसी बीमा संविदा

से संबंधित दस्तावेजों का निर्वचन करते समय न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह उन्हीं शब्दों का निर्वचन करे जिन शब्दों द्वारा पक्षकारों ने संविदा को अभिव्यक्त किया है क्योंकि न्यायालय का यह कार्य नहीं है कि वह कोई नई संविदा बनाए, चाहे वह कितनी भी युक्तिसंगत क्यों न हो ।

10. **ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने यह राय व्यक्त की है कि बीमा पालिसी का अर्थान्वयन उसमें अंतर्विष्ट अनुबंधों के प्रतिनिर्देश से ही किया जाना होता है और उसमें आने वाले शब्दों का कोई कृत्रिम अस्वाभाविक अर्थान्वयन नहीं किया जा सकता है ।

11. **यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में न्यायालय ने यह निर्णय दिया है कि पालिसी के निबंधन ही पक्षकारों के बीच की गई संविदा को शासित करेंगे और वे उसमें दी गई परिभाषाओं का अनुपालन करने के लिए आबद्ध हैं । इसके अलावा, पालिसी में आने वाली अभिव्यक्ति का निर्वचन पालिसी के निबंधनों के प्रति निर्देश से न कि किसी अन्य विधि में दी गई परिभाषाओं के प्रतिनिर्देश से किया जाना चाहिए क्योंकि पक्षकारों ने वह संविदा सोच-समझकर की है ।

12. उपर्युक्त सिद्धांत स्थापित विधिक स्थिति के क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं । उक्त प्रतिपादनाओं का स्वाभाविक परिणाम यह है कि पक्षकार पालिसी में प्रगणित खंडों द्वारा आबद्ध हैं और न्यायालय किसी खंड को भिन्न रूप देकर उसमें किसी साम्या को आरोपित नहीं करता है । न्यायालय करार में ऐसे अनुबंधों का निर्वचन कर सकता है । ऐसा इस कारण है कि उनका संबंध वाणिज्यिक संव्यवहारों से होता है और सौदेबाजी करने की शक्ति की कमी के कारण निबंधनों और शर्तों की अविवेकपूर्णता का सिद्धांत उद्भूत नहीं होता है । उक्त सिद्धांत एक भिन्न क्षेत्र में लागू होता है ।

13. इस संदर्भ में, **दीप ट्रेडिंग कंपनी** बनाम **इंडियन ऑयल कारपोरेशन और अन्य**[1] वाले निर्णय के प्रतिनिर्देश करना अनुदेशात्मक होगा । इस निर्णय में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने समयावधि के अवसान के पश्चात् मध्यस्थ नियुक्त करने संबंधी उस मामले में के प्रत्यर्थी सं. 1 के अधिकार के संबंध में विचार किया था । न्यायालय ने करार के खंड 29 के प्रतिनिर्देश किया जिसमें मध्यस्थ की नियुक्ति की प्रक्रिया के लिए उपबंध था । न्यायालय ने **दतार स्विचगियर्स लिमिटेड** बनाम **टाटा फाइनेंस**

---

[1] (2013) 4 एस. सी. सी. 35.

लिमिटेड और एक अन्य[1] और **पुंज लॉयड लिमिटेड** बनाम **पैट्रोनेट एम. एच. बी. लिमिटेड**[2] वाले मामलों में के निर्णयों के प्रतिनिर्देश करने के पश्चात्, निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया :–

> "19. यदि हम दतार स्विचगियर्स वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधिक स्थिति स्वीकृत तथ्यों को लागू करें तो यह दृष्टव्य होगा कि कारपोरेशन ने मध्यस्थ नियुक्त करने संबंधी अपना अधिकार खो दिया है । ऐसा इस कारण है कि तारीख 9 अगस्त, 2004 को व्यौहारी ने कारपोरेशन से करार के खंड 29 के निबंधनानुसार मध्यस्थ नियुक्त करने की मांग की थी किन्तु यह तब तक नहीं किया गया था जब तक कि व्यौहारी ने धारा 11(6) के अधीन इलाहाबाद उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति को मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए आवेदन कर दिया था । कारपोरेशन द्वारा यह नियुक्ति धारा 11(6) के अधीन कार्यवाहियों के लंबित रहने के दौरान ही की गई थी । कारपोरेशन द्वारा उसके अधिकार के समपहृत हो जाने के पश्चात् की गई ऐसी नियुक्ति का कोई महत्व नहीं था और इससे व्यौहारी धारा 11(6) के अधीन मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति की ईप्सा करने से निर्हकित नहीं हो गया है । हम उपर्युक्त प्रश्नों का तद्नुसार उत्तर देते हैं ।'

14. इस संबंध में, **न्यूटन इंजीनियरिंग एंड केमिकल्स लिमिटेड** बनाम **इंडियन ऑयल कारपोरेशन लिमिटेड और अन्य**[3] वाले मामले के निर्णय के प्रतिनिर्देश करना लाभप्रद है । उक्त मामले में, पक्षकारों के बीच एक अभिव्यक्त, स्पष्ट और असंदिग्ध माध्यस्थम् खंड मौजूद था जिसमें यह उपबंध किया गया था कि विवादों को प्रत्यर्थी कारपोरेशन के कार्यकारी निदेशक (उत्तरी क्षेत्र) को एकमात्र माध्यस्थम् के लिए निर्देशित किए जाएंगे और यदि उक्त प्राधिकारी एकमात्र मध्यस्थ के रूप में कार्य करने में असमर्थ या अनिच्छुक है तो मामले ऐसे कार्यकारी निदेशक (उत्तरी क्षेत्र) द्वारा अपने स्थान पर पदाभिहित ऐसे व्यक्ति को निर्देशित किए जाएंगे, जो एकमात्र मध्यस्थ के रूप में कार्य करने का इच्छुक है । माध्यस्थम् खंड में आगे यह उपबंध किया गया था कि यदि उनमें से कोई भी मध्यस्थ के रूप में कार्य करने में समर्थ नहीं है तो किसी अन्य व्यक्ति को एकमात्र मध्यस्थ

---

[1] (2000) 8 एस. सी. सी. 151.
[2] (2006) 2 एस. सी. सी. 638.
[3] (2013) 4 एस. सी. सी. 44.

के रूप में कार्य नहीं करना चाहिए और यदि कारपोरेशन में उक्त प्राधिकारी का कार्यालय अस्तित्व में नहीं रहता है और पक्षकार किसी सहमत समाधान पर पहुंचने में असमर्थ हैं तो माध्यस्थम् खंड अस्तित्व में नहीं रहेगा और उसके बारे में यह माना जाएगा कि उसने अपना क्रम पूरा कर लिया है । न्यायालय ने इस खंड का निर्वचन करते हुए यह मत व्यक्त किया कि ऐसी स्थिति में न्यायालय के पास विवादों के समाधान के लिए मध्यस्थ नियुक्त करने की कोई शक्ति नहीं है ।

15. **वल्कन इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने उस मामले में अंतर्वलित पालिसी के खंड 13, 18 और 19 का निर्वचन किया था । समुचित मूल्यांकन की दृष्टि से, हम उक्त निर्णय में विचारार्थ उद्भूत होने वाले पालिसी के खंडों के प्रतिनिर्देश करना उचित समझते हैं । वे खंड निम्नलिखित रूप में हैं :–

> "13. यदि दावा किसी प्रकार से कपटपूर्ण होता है या उसके समर्थन में कोई मिथ्या घोषणा की जाती है या उसका उपयोग किया जाता है या बीमाकृत व्यक्ति या उसकी ओर से कार्य करने वाले किसी व्यक्ति द्वारा उस पालिसी के अधीन कोई फायदा अभिप्राप्त करने के लिए किन्हीं कपटपूर्ण साधनों या युक्तियों का प्रयोग किया जाता है या बीमाकृत व्यक्ति के जानबूझकर किए गए कार्य से या उसकी मौनानुकूलता के कारण हानि या नुकसान होता है या यदि दावा किया जाता है और उसे अस्वीकार कर दिया जाता है तथा ऐसी अस्वीकृति के पश्चात् तीन मास के भीतर या (इस पालिसी की 18वीं शर्त के अनुसरण में कोई माध्यस्थम् प्रारंभ होने की दशा में) मध्यस्थ या मध्यस्थों या अधिनिर्णायक द्वारा अपना पंचाट किए जाने के पश्चात् तीन मास के भीतर कोई कार्रवाई या वाद प्रारंभ नहीं किया जाता है तो इस पालिसी के अधीन सभी फायदे समपहृत हो जाएंगे ।
>
> * * *
>
> 18. यदि किसी हानि या नुकसान की रकम के बारे में कोई मतभेद उद्भूत होता है तो ऐसा मतभेद अन्य सभी प्रश्नों से पृथक् मतभेद वाले पक्षकारों द्वारा लिखित में नियुक्त किए गए किसी मध्यस्थ के विनिश्चयार्थ या यदि वे किसी एकमात्र मध्यस्थ के लिए सहमत नहीं हो सकते हैं तो मध्यस्थों के रूप में दो अहितबद्ध व्यक्तियों के विनिश्चयार्थ निर्देशित किया जाएगा.... ।
>
> * * *

और यह अभिव्यक्त रूप से अनुबंधित और घोषित किया जाता है कि इस पालिसी के संबंध में कार्रवाई या वाद चलाने के किसी अधिकार की पूर्व शर्त यह होगी कि ऐसे मध्यस्थ, मध्यस्थों या अधिनिर्णायक द्वारा हानि या नुकसान की रकम के बारे में पंचाट, यदि उसे विवादग्रस्त किया जाता है, पहले अभिप्राप्त कर लिया जाएगा ।

19. किसी भी दशा में कंपनी हानि या नुकसान होने के बारह मास के अवसान के पश्चात् किसी हानि या नुकसान के लिए तब तक दायी नहीं होगी जब तक कि वह दावा लंबित कार्रवाई या माध्यस्थम् की विषयवस्तु न हो ।"

उक्त मामले में, कंपनी ने दावाकर्ता द्वारा दावाकृत हानि या नुकसान की किसी रकम का संदाय करने संबंधी अपने दायित्व को निराकृत कर दिया था । न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि कंपनी द्वारा उठाए गए विवाद का संबंध किसी भी प्रकार के नुकसान की कोई रकम संदत्त करने संबंधी उसके दायित्व से था और इसलिए अपीलार्थी द्वारा उठाया गया विवाद माध्यस्थम् खंड के अंतर्गत नहीं आता था । न्यायालय ने खंड 13 और 18 का गहन विश्लेषण किया और उसके बाद **स्कॉट** बनाम **ऐवरी**[1] वाले विनिश्चय के प्रति निर्देश किया, जिसमें उस खंड को **स्कॉट** बनाम **ऐवरी** (उपरोक्त) खंड के रूप में नामित किया गया है और रस्सल ऑन आर्बिट्रेशन से एक लेखांश उद्धृत किया, जो कि निम्नलिखित रूप में है :–

"तथापि, इस किस्म का खंड भी वास्तव में आत्यांतिक नहीं होता है जहां न्यायालय यह आदेश करता है कि किसी विशिष्ट विवाद के संबंध में माध्यस्थम् करार का प्रभाव समाप्त हो गया है, उसे इसके अतिरिक्त यह आदेश करने का भी विवेकाधिकार है कि स्कॉट **बनाम** ऐवरी (उपरोक्त) खंड भी निष्प्रभावी हो गया है (रस्सल ऑन आर्बिट्रेशन, अठारहवां संस्करण के पृष्ठ 57, 58 देखिए) ।"

उक्त मामले में, **विनी** बनाम **बिग्नोल्ड**[2] वाले मामले का अवलंब लिया गया था, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि माध्यस्थम् द्वारा रकम का अवधारण करना पालिसी के अनुसार वसूली करने के अधिकार की एक पूर्व-शर्त थी और यदि माध्यस्थम् में कोई पंचाट अभिप्राप्त किए बिना कोई

---

[1] (1856) 25 एल. जे. एक्स 308 = 5 एच. एल. सी. 811 = 4 डब्ल्यू. आर. 746.

[2] (1888) 20 क्यू. बी. डी. 171,172.

कार्रवाई आरंभ की गई थी तो वह चलाने योग्य नहीं थी । एक अन्य विनिश्चय, जिस पर बल दिया गया था, वह **केलिडोनियन इंश्योरेंस कंपनी** बनाम **एंड्रयू गिलमौर**[1] वाला मामला था । न्यायालय ने यह टिप्पणी की कि उक्त विनिश्चय ऐसे मामले के संबंध में था जिसमें एक व्यापक माध्यस्थम् खंड अंतर्विष्ट था और उसमें किसी पंचाट के बिना कार्रवाई की पोषणीयता के वर्जन के रूप में **स्कॉट** बनाम **ऐवरी** (उपरोक्त) खंड को लागू करना न्यायोचित ठहराया गया था ।

16. तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने यह उल्लेख किया कि **ओ कोनोर** बनाम **नारविच यूनियन फॉयर एंड लाइफ इंश्योरेंस सोसायटी**[2] वाले मामले में **विनी** बनाम **बिग्नोल्ड** (उपर्युक्त) वाले विनिश्चय को प्रभेदित किया गया था और न्यायमूर्ति होम्स के एक लेखांश को उद्धृत किया गया था :–

> "अब, यदि संविदा की यह शर्त थी कि इस किस्म के मतभेद को माध्यस्थम् द्वारा तय किया जाना था तो मुझे कार्रवाई को रोकने में हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए .....
>
> * * *
>
> किन्तु वादी की पालिसी में ऐसा कोई उपबंध नहीं है कि ऐसा संविवाद, जो कि उद्भूत हुआ है, माध्यस्थम् को निर्देशित किया जाना है । उसमें सावधानीपूर्वक तैयार किया गया एक खंड है, जिसके द्वारा यह करार किया गया है कि संदत्त की जाने वाली रकम, जो कि किसी भी रकम का संदाय करने संबंधी दायित्व से पृथक् है, मध्यस्थों द्वारा तय की जानी है और तब तक कोई कार्रवाई प्रारंभ नहीं की जा सकती है जब तक कि उन्होंने ऐसी रकम अवधारित न कर दी हो । इस खंड का एक परिणाम उस दशा में दो कार्यवाहियों को आवश्यक बनाना हो सकता है जहां हानि की रकम तथा समस्त दायित्व से इनकार करने के बारे में कोई विवाद होता है; किन्तु यह उन पक्षकारों में से, जिन्होंने उसे संविदा की एक शर्त बनाया है, किसी पक्षकार के लिए शिकायत करने का आधार नहीं होना चाहिए;"

न्यायालय ने उक्त लेखांश को उद्धृत करने के पश्चात् उक्त मत से

---

[1] 1893 अपील केसेज़ 85 = 9 टी. एल. आर. 146 = 57 जे. पी. 228.

[2] (1894) 2 आइरिश एल. आर. 723 = 28 आइरिश एल. टी. 95.

अपनी सहमति व्यक्त की ।

17. प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउन्सेल द्वारा बीमा विधि के संबंध में मैकगिलीवरे के पांचवे संस्करण के कुछ पैरा का अवलंब लिया गया था । उक्त पैरा निम्नलिखित रूप में है :–

> "विधि का यह नियम है कि पक्षकार अपनी प्राइवेट संविदा द्वारा न्यायालय की अधिकारिता छीन नहीं सकते; किन्तु यह अभिनिर्धारित किया गया है कि तथापि, किसी संविदा के पक्षकार इस संबंध में करार कर सकते हैं कि इसके बारे में कोई वादहेतुक तब तक उद्भूत नहीं होगा जब तक उनके बीच कोई विवादग्रस्त विषय माध्यस्थम् द्वारा अवधारित न कर दिया गया हो और इसके पश्चात् केवल मध्यस्थों के पंचाट के पश्चात् वादहेतुक उद्भूत होगा ।"

प्रत्यर्थी की ओर से निम्नलिखित पैरा की सहायता ली गई थी :–

> "नियमानुसार, जहां हानि या नुकसान की रकम ही एकमात्र ऐसा विषय है जो कि पक्षकार माध्यस्थम् के लिए निर्देशित करते हैं वहां यदि बीमाकर्ता पालिसी से संबंधित किसी दायित्व को निराकृत करते हैं तो बीमाकृत व्यक्ति पर पालिसी के संबंध में कोई कार्रवाई प्रारंभ करने से पूर्व रकम के बारे में मध्यस्थता कराने की कोई बाध्यता नहीं है ।"

18. यहां यह उल्लेख करना उपयुक्त है कि मुम्बई उच्च न्यायालय ने **ईगल स्टार एंड ब्रिटिश डोमिनियन्स इंश्योरेंस कंपनी** बनाम **दीनानाथ एंड हेमराज**[1] वाले मामले में समरूप खंड 13 का निर्वचन किया था । उच्च न्यायालय ने अंततः यह निर्णय दिया था :–

> "किन्तु खंड 13 में ऐसी विभिन्न आकस्मिकताएं उपवर्णित की गईं हैं जो कि यदि स्थापित कर दी जाती है तो बीमाकृत व्यक्ति मध्यस्थों द्वारा कोई पंचाट किए बिना कार्रवाई प्रारंभ करने का हकदार हो जाता है । इन आकस्मिकताओं में एक आकस्मिकता यह है कि 'यदि दावा किया जाता है और उसे अस्वीकार कर दिया जाता है' जो कि यदि स्थापित हो जाए तो कार्रवाई का अधिकार देता है, वाद के

---

[1] आई. एल. आर. 47 मुम्बई 509 = ए. आई. आर. 1923 मुम्बई 249 = 25 बाम्बे एल. आर. 164.

लिए उपबंधित परिसीमा अवधि अस्वीकार करने की तारीख से तीन मास नियत की गई है । जबकि यह भी उपबंधित किया गया है कि जहां पालिसी की शर्त 18 के अनुसरण में माध्यस्थम् कार्यवाही आरंभ होती है वहां पंचाट किए जाने के पश्चात् वाद के लिए तीन मास का समय अनुज्ञात किया जाना चाहिए । अतः. यह पूर्णतः स्पष्ट होता है कि कार्रवाई का अधिकार कंपनी द्वारा दावे को अस्वीकार करने के पश्चात् प्रोद्भूत हो गया था । स्वाभाविक रूप से उस प्रश्न का विनिश्चय प्रथमतः वाद द्वारा किया जाना होगा क्योंकि खंड 18 के अधीन वह प्रश्न माध्यस्थम् के लिए कभी भी निर्देशित नहीं किया जा सकता था ।"

इस न्यायालय ने **वल्कन इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में मुम्बई उच्च न्यायालय के मत का अनुमोदन किया ।

19. इस प्रक्रम पर, हम **वल्कन इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में की तथ्यात्मक स्थिति का संक्षेप में कथन कर सकते हैं । उक्त मामले में, प्रत्यर्थी ने उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर स्थित न्यायालय में माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 की धारा 20 के अधीन एक आवेदन फाइल किया था । चूंकि उस न्यायालय की अधिकारिता के बारे में आक्षेप किया गया था, इसलिए प्रत्यर्थी ने उसे दिल्ली न्यायालय में पुनः फाइल किया । दिल्ली स्थित विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए वह आवेदन कर दिया कि बीमा कंपनी द्वारा खंड 13 के अधीन दायित्व के निराकरण के कारण उद्भूत विवाद खंड 18 में अंतर्विष्ट माध्यस्थम् करार की परिधि के भीतर आता था और माध्यस्थम् के लिए निर्देश किया जा सकता था किन्तु खंड 19 के अनुसार वह याचिका परिसीमा द्वारा वर्जित थी । अपील फाइल किए जाने पर, दिल्ली उच्च न्यायालय ने यह राय व्यक्त करते हुए उस निर्णय को उलट दिया कि खंड 18 हानि या नुकसान की रकम के बारे में मतभेदों तक निर्बंधित था ; यह कि माध्यस्थम् को निर्देश करने का अधिकार छीना नहीं गया था और माध्यस्थम् खंड के अंतर्गत विवाद तब भी आता था भले ही बीमा कंपनी ने दावा को पूर्ण रूप से निराकृत कर दिया हो ; यह कि माध्यस्थम् खंड 18 तब तक अप्रवर्तनशील था जब तक कि खंड 19 में दी गई शर्तों को पूरा नहीं कर दिया गया था ; यह कि उसमें उल्लिखित शर्त की पूर्ति हो गई थी क्योंकि प्रत्यर्थी सं. 1 ने उस तारीख को माध्यस्थम् प्रारंभ कर दिया था जब उसने तारीख 1 अक्तूबर, 1963 की सूचना जारी

की थी ; और यह कि उसका दावा खंड 19 के अर्थान्तर्गत किसी लंबित माध्यस्थम् का विषय था । उच्च न्यायालय ने इस दृष्टिकोण के आधार पर अपील मंजूर कर ली थी । इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय को उलटते हुए अंततः निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया :–

> "24. किन्तु इस मामले में इस विषय पर सतर्कतापूर्वक विचार करने पर हम इस निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि प्रत्यर्थी 1 द्वारा किए गए दावे के कंपनी द्वारा निराकरण करने पर पक्षकारों के बीच जो मतभेद पैदा हुआ था वह ऐसा नहीं था जिसे माध्यस्थम् खंड लागू होता हो और इसलिए माध्यस्थम् करार फाइल नहीं किया जा सकता था और अधिनियम की धारा 20 के अधीन कोई मध्यस्थ नियुक्त नहीं किया जा सकता था । निराकरण की तारीख के तीन मास के भीतर कंपनी के दायित्व को सिद्ध करने के लिए वाद संस्थित करने की बजाय प्रत्यर्थी सं. 1 ने धारा 20 के अधीन कार्यवाही शुरू करके गलती की है ।"

यहां यह उल्लेख करना हमारी बाध्यता है कि यद्यपि प्रत्यर्थी ने उक्त निर्णय का अवलंब लिया है तथापि, इससे उसे कोई सहायता प्राप्त नहीं होती है । इसके प्रतिकूल, जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा महसूस किया गया है, यह माध्यस्थम् खंड के भाग 2 और भाग 3 में अस्पष्टता के बोध को दूर करता है । इसके अलावा, इसके द्वारा निराकरण के मुद्दे पर प्रकाश डाला गया है ।

20. अब हम **मैसर्स जम्बो बैग्स लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में मद्रास उच्च न्यायालय के विनिश्चय के प्रतिनिर्देश कर सकते हैं । उक्त मामले में, विद्वान् मुख्य न्यायमूर्ति ने पालिसी की शर्तों के खंड 13 का निर्वचन किया । **वल्कन इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले के प्रतिनिर्देश करते हुए, उन्होंने निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

> "चूंकि वह विवाद, जो माध्यस्थम् के लिए निर्देशित नहीं किया जा सकता है, इस खंड के अंतर्गत नहीं आता है इसलिए वह माध्यस्थम् की विषयवस्तु के संबंध में नहीं हो सकता है तथा इस मामले में बीमाकृत के लिए उपचार केवल वाद संस्थित करना है ।"

और आगे यह अभिनिर्धारित किया :–

> "मेरा यह मत है कि इस बात को देखते हुए कि माध्यस्थम् खंड

में विवादों का न्यायनिर्णयन माध्यस्थम् द्वारा करने की पद्धति को वहां विनिर्दिष्ट रूप से अपवर्जित किया गया है जहां दावे का पूर्ण रूप से निराकरण कर दिया जाता है, याची को माध्यस्थम् का उपचार उपलब्ध नहीं है । इस प्रकार, विधि के अनुसार केवल सिविल वाद फाइल करने का उपचार उपलब्ध होगा ।"

हम उक्त मत से सहमत हैं ।

21. **एस्सार स्टील इंडिया लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में मुम्बई उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने ऐसी स्थिति के संबंध में विचार किया जहां बीमाकर्ता ने यह आधार अपनाया था कि पालिसी आरंभ से शून्य थी । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने उक्त आधार का खंडन करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि विवाद माध्यस्थम् को निर्देशित किए जा सकेंगे चूंकि स्वामी द्वारा किए गए अभिवाक् का विनिश्चय मध्यस्थ द्वारा किया जा सकता है । हमारा आशय उक्त विनिश्चय की शुद्धता के संबंध में विचार करना नहीं है क्योंकि प्रस्तुत मामले में अंतर्वलित प्रश्न पूर्णतः भिन्न है ।

22. **ए. अय्यासामी** (उपर्युक्त) वाले मामले में दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने इस प्रश्न पर विचार किया कि क्या मध्यस्थ द्वारा कपट के अभिवाक् को पर्याप्त रूप से ध्यान में रखा जा सकता है । न्यायमूर्ति सीकरी ने, तथ्यों का विश्लेषण करते हुए, निम्नलिखित राय व्यक्त की :–

"28. अतः, हमारी राय यह है कि तात्पर्यित कपट के अभिकथन इतने गंभीर नहीं थे कि जिन्हें मध्यस्थ द्वारा ध्यान में नहीं रखा जा सकता हो । अतः, निचले न्यायालयों ने अधिनियम की धारा 8 के अधीन अपीलार्थी के आवेदन को नामंजूर करके गलती की है । हम इन निर्णयों को उलटते हुए इन अपीलों को मंजूर करते हैं और परिणामस्वरूप अपीलार्थी द्वारा वाद में धारा 8 के अधीन फाइल किया गया आवेदन मंजूर किया जाता है, जिसके द्वारा पक्षकारों को माध्यस्थम् के सुपुर्द किया जाता है ।"

न्यायमूर्ति चन्द्रचूड़ ने, अपनी समवर्ती राय में, माध्यस्थम् के क्षेत्र में अनेक नज़ीरों और साहित्य के प्रतिनिर्देश करने के पश्चात्, निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

"53. मेरी राय में, माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 का निर्वचन इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे कि उसके निर्वचन में अंतर्निहित सिद्धांतों को ऐसी रीति में अनुकूल बनाया जा सके जो कि

साधारण विधि के संसार में विद्यमान दृष्टिकोणों से संगत हो । भारत में विधिशास्त्र को माध्यस्थम् की संस्थागत प्रभावकारिता को सुदृढ़ करने की ओर विकसित होना चाहिए । पक्षकारों द्वारा अपने सभी दावों का समाधान करने के लिए पूर्ण उपचार के रूप में चुने गए मंच का सम्मान करना उस विकास का एक भाग है । न्यायालयों के हस्तक्षेप को कम करना पुनः इसी सिद्धांत की मान्यता है ।"

उसने आगे यह अभिनिर्धारित किया कि तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में कपट का अभिकथन मात्र करना, 1996 के अधिनियम की भाषा और भाव को ध्यान में रखते हुए पक्षकारों को अपने विवादों को माध्यस्थम् के लिए प्रस्तुत करने संबंधी उनकी बाध्यता से अलग करने के लिए पर्याप्त नहीं था । हमारी सुविचारित राय में, यह विनिश्चय प्रस्तुत मामले को लागू नहीं होता है ।

23. यद्यपि प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउन्सेल ने **क्लोरो कंट्रोल्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले के प्रतिनिर्देश किया है तथापि, इसका विश्लेषण करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह कोई ऐसी नज़ीर नहीं है जो प्रस्तुत मामले में के मुकदमे का विनिश्चय करने के लिए दूर-दूर तक भी सुसंगत हो ।

24. इस बात पर विशेष जोर देने की आवश्यकता नहीं है कि माध्यस्थम् खंड का कठोरतापूर्वक निर्वचन करना आवश्यक है । खंड में की किसी अभिव्यक्ति से माध्यस्थम् का आशय सुस्पष्ट रूप से अभिव्यक्त होना चाहिए । इसमें ऐसी धारणा अधिकथित की जा सकती है जिन स्थितियों में माध्यस्थम् खंड को प्रभावी नहीं किया जा सकता है । यदि किसी खंड में यह अनुबंधित है कि कतिपय परिस्थितियों के अधीन कोई माध्यस्थम् नहीं हो सकता है और वे प्रमाण रूप से स्पष्ट हैं तो मध्यस्थ की नियुक्ति से संबंधित संविवाद को छोड़ देना होगा ।

25. वर्तमान मामले में, खंड 13 में स्पष्ट रूप से यह आधारतत्व अधिकथित किया गया है कि यदि बीमाकर्ता ने दायित्व को विवादित किया है या उसे स्वीकार नहीं किया है तो कोई मतभेद या विवाद माध्यस्थम् के लिए निर्देशित नहीं किया जाएगा । मामले में विशेष बल इस बात पर दिया गया है कि क्या बीमाकर्ता ने पालिसी के अधीन या उसकी बाबत अपने दायित्व को विवादित किया है या उसे स्वीकार नहीं किया है । तारीख 26 दिसम्बर, 2014 के पत्र द्वारा प्रत्यर्थी के दावे को नामंजूर करने के लिए

निम्नलिखित कारण बताए गए थे :–

"1. आयातित कोयले की अभिकथित हानि स्पष्ट रूप से सामान की कमी है ।

2. स्टाक की प्रसंस्करण में कोई वास्तविक हानि नहीं हुई थी ।

3. स्पंज लौह का क्षय अंतर्निहित खराबी के कारण हुआ है ।

4. भवन/शैडों आदि मद्धे हुई हानि को बीमाकृत अनुरक्षण के अंतर्गत लाने के लिए बढ़ा-चढ़ा कर दिखाया गया है ।

5. चूंकि कोई तात्विक क्षति नहीं हुई है इसलिए कारबार में व्यवधान संबंधी हानि नहीं हुई है ।"

26. प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल ने निवेदन किया है कि उपर्युक्त संसूचना पालिसी के अधीन या उसकी बाबत दायित्व से प्रत्याख्यान करने की कोटि में नहीं आती है । हम समझते हैं कि संसूचना के पठन मात्र से विवाद उचित रूप से खंड 13 के भाग 2 के अंतर्गत आता है । खंड के उक्त भाग में स्पष्ट रूप से यह सूचित होता है कि पक्षकार इस संबंध में सहमत हो गए हैं और उन्होंने यह समझ लिया है कि यदि कंपनी ने दायित्व को विवादित किया है या उसे स्वीकार नहीं किया है तो कोई मतभेद या विवाद माध्यस्थम् को निर्देशित नहीं किया जा सकेगा । उस संसूचना में दावे को बिल्कुल भी स्वीकार न करने के लिए कारण बताए गए हैं । यह बीमाकर्ता द्वारा दायित्व से पूर्णतः प्रत्याख्यान करने के सिवाय और कुछ नहीं है । यह हानि की मात्रा से संबंधित कोई विवाद नहीं है । प्रस्तुत मामले में, हमारा संबंध इस बात से नहीं है कि पालिसी शून्य थी अथवा नहीं क्योंकि यह प्रश्न बीमाकर्ता द्वारा नहीं उठाया गया था । बीमा कंपनी ने तथ्यों के आधार पर दायित्व को उपर्युक्त कारणों के आधार पर स्वीकार करने से इनकार करके दावे का निराकरण किया है । ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि परिमाण के संबंध में किसी प्रकार का कोई विवाद है । यह प्रत्यर्थी द्वारा यथा दावाकृत हानि की क्षतिपूर्ति करने से प्रत्याख्यान है । हमारे मतानुसार, ऐसी स्थिति पूर्ण रूप से विवादों से प्रत्याख्यान करने और दायित्व को स्वीकार न करने की संकल्पना के भीतर आती है । यह माध्यस्थम् खंडों में से कोई एक खंड नहीं है जिसका निर्वचन इस तरीके से किया जा सकता है कि किसी दावे

का प्रत्याख्यान स्वतः विवाद की कोटि में आएगा और इसलिए उसे माध्यस्थम् को निर्देशित करना होगा । पक्षकार पालिसी के अधीन करार किए गए निबंधनों और शर्तों तथा उसमें अंतर्विष्ट माध्यस्थम् खंड से आबद्ध हैं । यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिसमें माध्यस्थम् से बचने के लिए मात्र कपट के अभिकथन का दबाव डाला गया हो । यह कोई ऐसी स्थिति नहीं है जहां यह आधार अपनाया गया हो कि कतिपय दावों का संबंध छूटप्राप्त विषयों से है और इसलिए वे माध्यस्थम् योग्य नहीं हैं । दूसरे भाग में प्रयुक्त भाषा पूर्णतः स्पष्ट और असंदिग्ध है चूंकि उसमें यह अनुबंधित है कि यह स्पष्ट रूप से माना और समझा गया है कि यदि कंपनी ने दायित्व को विवादित किया है या उसे स्वीकार नहीं किया है तो कोई भी मतभेद या विवाद माध्यस्थम् के लिए निर्देशित किए जाने योग्य नहीं होगा । उच्च न्यायालय ने यह राय अभिव्यक्त करके गंभीर त्रुटि की है कि भाग 2 और भाग 3 के बीच असंगति है । उक्त विश्लेषण **वल्कन इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के विनिश्चय में अधिकथित सिद्धांतों के प्रतिकूल है । अतः, प्रत्यर्थी जिस एकमात्र उपचार का अवलंब ले सकता है वह यह है कि वह अपनी शिकायतों के शमन के लिए सिविल वाद संस्थित करे । यदि दो मास के भीतर सिविल वाद फाइल कर दिया जाता है तो परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 14 का लाभ उसके फायदे में लागू हो जाएगा ।

27. उपर्युक्त आधारभूत कारणों को ध्यान में रखते हुए, अपील मंजूर की जाती है और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश अपास्त किया जाता है । मामले के तथ्यों और उसकी परिस्थितियों में, खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

ग्रो.